॥ श्री ॥
विद्याभवन संस्कृत ग्रन्थमाला
४८

छन्दोविंशतिका

'विमला' - व्याख्योपेता

सम्पादकः
पण्डित रामचन्द्रझा व्याकरणाचार्यः

चौखम्बा विद्याभवन
वाराणसी

आमुख

(परीक्षानिर्धारित छन्दों की सूची पृ० १६ पर देखें)

छन्दःशास्त्र—

सामान्यतः विचार करने से संस्कृत-वाङ्मय का बाह्य स्वरूप दो प्रकार का है—(१) अनियन्त्रित और (२) नियन्त्रित।

प्रथम 'गद्य' नाम से और द्वितीय 'पद्य' नाम से प्रसिद्ध है। संस्कृत-वाङ्मय में जिस प्रकार उच्चारण-नियमन शिक्षाशास्त्र से, शब्द-नियमन व्याकरण-शास्त्र से और वाक्य-नियमन साहित्यशास्त्र से किया जाता है, उसी प्रकार अक्षर-नियमन छन्दःशास्त्र से किया जाता है।

अक्षर कहने से स्वरसहित व्यंजन अथवा केवल स्वर समझा जाता है। छन्दःशास्त्र में केवल व्यंजन का कुछ भी महत्त्व नहीं है। अक्षरों के दो भेद हैं—ह्रस्व (लघु) और दीर्घ (गुरु)। ह्रस्व अक्षर की एक मात्रा और दीर्घ अक्षर की दो मात्राएँ मानी जाती हैं :—

एकमात्रो भवेद् ह्रस्वो द्विमात्रो दीर्घ उच्यते।
त्रिमात्रस्तु प्लुतो ज्ञेयो व्यञ्जनं चार्धमात्रकम्॥

अर्थात् एकमात्रिक वर्ण को ह्रस्व, द्विमात्रिक को दीर्घ तथा त्रिमात्रिक को प्लुत कहते हैं। स्वररहित व्यंजन अर्धमात्रा का होता है।

मात्रा का तात्पर्य उच्चारण-कालविशेष से है। ह्रस्व अक्षर के उच्चारण में जो काल लगता है, उसका एकमात्रिक काल कहते हैं। इसीलिए ह्रस्व अक्षर की एक मात्रा मानी जाती है। यही प्रकार दीर्घ अक्षर के लिए भी है। दीर्घ अक्षर के उच्चारण-काल को द्विमात्रिक काल कहते हैं तथा दीर्घ अक्षर की दो मात्राएँ मानी जाती हैं।

संयुक्त अक्षर से पहला अक्षर अथवा अनुस्वार या विसर्गयुक्त अक्षर भी द्विमात्रिक माना जाता है, दीर्घ अक्षर के समान उसकी भी दो मात्राएँ मानी जाती हैं, किन्तु उसे दीर्घ न कहकर गुरु कहते हैं :-

संयुक्ताद्यं दीर्घं सानुस्वारं विसर्गसम्मिश्रम्।
विज्ञेयमक्षरं गुरुं पादान्तस्थं विकल्पेन॥

अर्थात् संयुक्त वर्ण के पूर्व जो वर्ण हो (जैसे विष्णु में 'वि' आदि)' जो दीर्घ (द्विमात्रिक) हो (जैसे आ, का आदि), जो अनुस्वारसहित हो (जैसे अं, कं, आदि), और जिसके अन्त में विसर्ग हो (जैसे अः, कः आदि वह गुरु होता है, किन्तु पाद के अन्त में अर्थात् छन्द के चतुर्थ चरण के अन्त में प्रयोजन के अनुसार ह्रस्व वर्ण लघु अथवा दीर्घ माना जाता है।

इन्हीं लघु गुरु वर्णों का विवक्षित अक्षर-संख्या में जो विशिष्ट क्रम होता है, उसी को छन्द कहते हैं। लौकिक वाङ्मय में इस प्रकार की रचना 'पद्य' नाम से व्यवहृत होती है।

पद्य—

पदं=चरणम्, तद् अर्हतीति 'पद्यम्'। चरण का अर्थ है श्लोक का चतुर्थ भाग। सभी वृत्तों की रचना इसी प्रकार चार-चार चरणों से होती है, इसीलिए वृत्तमात्र को 'पद्य' कहते हैं।

यति अथवा विराम—

पद्य कहते हुए जहाँ पर जिह्वा को विश्रान्ति देना आवश्यक होता है, उस स्थान को यति-स्थान कहते हैं—'यतिर्जिह्वेष्टविश्रान्तिः'। यह यति का सामान्य लक्षण है। यति स्थान में पद-भङ्ग होना दोष माना जाता है, क्योंकि उससे अर्थानुसन्धान में प्रतिबन्ध होता है। इस दोष का यति-भङ्ग कहते हैं। यति-स्थान में पदैकदेश होने से वहाँ विश्रान्ति ले नहीं सकते। यदि विश्रान्ति लें तो पद भङ्ग होकर अर्थानुसंधान बिगड़ जाता है। काव्यों में अर्थानुसंधान ही प्रधान होने से पद-भङ्ग का होना इष्ट नहीं है, अतः सम्पूर्ण पद का ही उच्चारण करना पड़ता है। वैसा उच्चारण करने से पद्य के विश्रान्तिस्थान-यति का भंग हो जाता है, जैसे—

'नमस्तस्मै महादेवा-य शशाङ्कार्धधारिणे।' इत्यादि।

गण—

गण आठ प्रकार के होते हैं। उनका लक्षण-स्वरूप इस प्रकार है :—

मस्त्रिगुरुस्त्रिलघुश्च नकारो भादिगुरुः पुनरादिलघुर्यः।
जो गुरुमध्यगतो रलमध्यः सोऽन्तगुरुः कथितोऽन्तलघुस्तः॥

जिसमें तीनों गुरु हो वह मगण, जिसमें तीनों लघु हों वह नगण, जिसमें आदि गुरु और दो लघु हों वह भगण, जिसमें आदि लघु और दो गुरु हों

वह यगण, जिसके मध्य में गुरु और आदि-अन्त में लघु हों, वह जगण, जिसके मध्य में लघु और आदि-अन्त में गुरु हों वह रगण, जिसके अन्त में गुरु और आदि-मध्य में लघु हों वह सगण, जिसके अन्त में लघु और आदि-मध्य में गुरु हों, वह तगण है।

गणों के लिखने का प्रकार—

मगणः	यगणः	रगणः	सगणः	तगणः	जगणः	भगणः	नगणः
SSS	ISS	SIS	IIS	SSI	ISI	SII	III

गुरुः— S लघुः— I इति।

नोटः—गणों के स्वरूप को ध्यान में रखने के लिए निम्नलिखित सूत्र को कण्ठस्थ कर लेना चाहिए—

'यमाताराजभानसलगम्।'

जिस गण का स्वरूप जानने की इच्छा हो, उस गुण का वाचक प्रथमाक्षर लेकर उसके आगे के दो अक्षर पढ़ने से उसका स्वरूप बन जाता है।

जैसे—हम 'यगण' का स्वरूप जानना चाहते हैं तो सूत्र के पहले अक्षर 'य' से आगे दो अक्षर 'माता' मिलने से 'यमाता' हुआ, यह यगण का आदि लघु और मध्यान्तगुरु स्वरूप बन जाता है। इसी प्रकार 'मगण' का स्वरूप जानना हो तो 'मा' में 'तारा' मिलने से त्रिगुरु मगण बन जाता है। तगण का 'ताराज', रगण का 'राजभा' इत्यादि।

संख्या-गणनाम-रूप-देवता-फल-मित्रादि-
शुभाशुभ-ज्ञापकचक्रम्—

सं०	गणनाम	रूपम्	देवता	फलम्	मित्रादि	शुभाशुभे
१	मगणः	SSS	मही	लक्ष्मीः	मित्रम्	शुभम्
२	यगणः	ISS	जलम्	वृद्धि	दासः	शुभम्
३	रगणः	SIS	अग्निः	मृत्युः	शत्रुः	अशुभम्
४	सगणः	IIS	वायुः	विदेशः	शत्रुः	अशुभम्
५	तगणः	SSI	नभः	शून्यम्	उदासः	समम्
६	जगणः	ISI	रविः	रोगः	उदासः	अशुभम्
७	भगणः	SII	शशी	यशः	दासः	शुभम्
८	नगणः	III	स्वर्गः	सुखम्	मित्रम्	शुभम्

॥ श्रीः ॥

छन्दोविंशतिका

'विमला' व्याख्योपेता

—

(१) आर्याछन्दः

यस्याः पादे प्रथमे द्वादश मात्रास्तथा तृतीयेऽपि।
अष्टादश द्वितीये चतुर्थके पञ्चदश सार्या ॥ १ ॥

अन्वयः—यस्याः प्रथमे पादे तृतीयेऽपि [पादे] द्वादश [मात्राः भवन्ति], द्वितीये [पादे] अष्टादश [मात्राः भवन्ति], चतुर्थके [पादे च] पञ्चदश [मात्राः भवन्ति], सा आर्या [भवति]।

जिस छन्द के प्रथम और तृतीय चरण में बारह-बारह मात्राएँ, द्वितीय चरण में अठारह मात्राएँ और चतुर्थ चरण में पन्द्रह मात्राएँ हों, वह आर्या छन्द है ॥

उदाहरणम्— सा जयति जगत्यार्या देवी दिवमुत्पतिष्णुरतिरुचिरा।
या दृश्यतेऽम्बरतले कंसवधोत्पातविद्युदिव ॥

(क) गीतिः [आर्या] छन्दः

आर्यापूर्वार्द्धसमं द्वितीयमपि यत्र भवति साधुगते !
छन्दोविदस्तदानीं गीतिं तां प्राक्तना हि भाषन्ते ॥

अन्वयः—हे साधुगते ! यत्र द्वितीयमपि आर्यापूर्वार्द्धसमं भवति। प्राक्तनाः छन्दोविदः तदानीं तां गीतिं हि भाषन्ते।

जिस छन्द के पूर्वार्द्ध और उत्तरार्द्ध दोनों आर्या के पूर्वार्द्ध के तुल्य हों, उसे कवियों ने गीति नामक छन्द कहा है।

उदाहरणम्—केशववंशीगीतिर्लोकमनोहरिणहारिणी जयति।
गोपीमानग्रन्थिविमोचनी दिव्यगायनाश्चर्या ॥

(ख) उपगीतिः [आर्या] छन्दः

आर्योत्तरार्द्धतुल्यं प्रथमार्द्धमपि प्रयुक्तं चेत्।
लोके तामुपगीतिं संभाषन्ते महाकवयः ॥

अन्वयः—प्रथमार्द्धम् अपि आर्योत्तरार्द्धतुल्यं प्रयुक्तं चेत् लोके महाकवयः ताम् उपगीतिं संभाषन्ते।

जिस छन्द के पूर्वार्द्ध और उत्तरार्द्ध दोनों ही भाग आर्या के उत्तरार्द्ध के सदृश हों, उसे महाकवियों ने उपगीति छन्द कहा है।

उदाहरणम्—अधिसु भारति भारत-वर्षीया भारती भातु।
येन हि भाषा राष्ट्र-स्योन्नतिपदवीं सदा यातु ।।

*** (२) [अष्टाक्षरजाता[1]] अनुष्टुप् छन्दः**

श्लोके षष्ठं गुरुं ज्ञेयं सर्वत्र लघु पञ्चमम्।
द्विचतुष्पादयोर्ह्रस्वं सप्तमं दीर्घमन्ययोः ।। २ ।।

अन्वयः—श्लोके सर्वत्र पञ्चमं लघु षष्ठं [च] गुरुं, चतुष्पादयोः सप्तम ह्रस्वम्, अन्ययोः [सप्तमं] दीर्घं ज्ञेयम्।

जिस छन्द के चारों चरणों में पञ्चम अक्षर लघु तथा षष्ठ अक्षर गुरु हो और दसरे तथा चौथे चरणों में सप्तम अक्षर ह्रस्व हो और प्रथम तथा तृतीय चरणों में सप्तम अक्षर दीर्घ हों, उसको अनुष्टुप् छन्द कहते हैं। ।। २ ।।

उदाहरणम् – रामचन्द्र-दयादृष्ट्या सदा विद्याविलासभृत्।
ब्रह्मशङ्कुरतां यातु भारते शिष्यमण्डली ।।

(३) वियोगिनी [सुन्दरी] छन्दः

विषमे यदि सौ जगौ समे सभरा ल्गौ च तदा वियोगिनी ।। ३ ।।

यदि किसी छन्द के विषम [प्रथम, तृतीय] चरणों में क्रम से दो सगण, जगण और गुरु हों तथा सम [द्वितीय, चतुर्थ] चरणों में सगण, भगण, रगण तथा गुरु हों तो उसे वियोगिनी अथवा सुन्दरी छन्द कहते हैं ।। ३ ।।

अयुजोर्यदि सौ जगौ युजोः सभरा ल्गौ यदि सुन्दरी तदा ।।

यदि प्रथम तथा तृतीय पाद में दो सगण, एक जगण और गुरु हों, तथा

---

* इस प्रकार के चिह्नांकित ११ छन्द 'कामेश्वर सिंह सं० विश्वविद्यालय दरभंगा' की परीक्षा में भी पाठ्य स्वीकृत हैं।

१. अष्टाक्षरपदवन्ति सर्वाणि छन्दांसि 'अनुष्टुप्' इत्युच्यन्ते; परन्तु 'श्लोके षष्ठम्' इति श्लोकमेव पण्डिता 'अनुष्टुप्' इति व्यवहरन्ति। केचन पद्यमिन्यपि व्यपदिशन्ति।

तद्यथा— पञ्चमं लघु सर्वत्र सप्तमं द्विचतुर्थयोः।
षष्ठं गुरु विजानीयादेतत् पद्यस्य लक्षणम् ।।

जिसके चारों चरणों में पंचम अक्षर एवं द्वितीय और चतुर्थ चरणों में सप्तम अक्षर लघु हो और सर्वत्र षष्ठ अक्षर दीर्घ हो उसे पद्य [अनुष्टुप्] छन्द कहते हैं।

द्वितीय और चतुर्थ पाद में सगण, भगण, रगण तथा एक लघु और एक गुरु हों तो सुन्दरी (वियोगिनी) नामक छन्द होता है।

उदाहरणम् – विहितां प्रियया मनःप्रियामथ निश्चित्य गिरं गरीयसीम्।
उपपत्तिमदूर्जिताश्रयं नृपमूचे वचनं वृकोदरः ।।

*** (४) इन्द्रवज्राछन्दः**

यत्र त्रिषट्सप्तममक्षरं स्याद् ह्रस्वं तु वृत्ते नवमं च तद्वत्।
मत्या विलज्जीकृतवाक्पते हे ! तामिन्द्रवज्रां ब्रुवते कवीन्द्राः ।।४।।

अन्वयः—हे मत्या विलज्जीकृतवाक्पते ! यत्र वृत्ते तु त्रिषट्सप्तमं तद्वत् नवमञ्च अक्षरं ह्रस्वं स्यात्, कवीन्द्राः ताम् इन्द्रवज्रां ब्रुवते।

जिसके तृतीय, षष्ठ सप्तम और नवम अक्षर ह्रस्व हों, उसे कवीन्द्रों ने इन्द्रवज्रा छन्द कहा है ।। ४ ।।

स्यादिन्द्रवज्रा यदि तौ जगौ गः।

जिस छन्द में क्रमशः दो तगण, जगण और दो गुरु होते हैं, वह 'इन्द्रवज्रा' छन्द कहाता है।

उदाहरणम्—गोष्ठे गिरिं सव्यकरेण धृत्वा रुष्टेन्द्रवज्राहतिमुक्तवृष्टौ।
यो गोकुलं गोपकुलञ्च सुस्थं चक्रे स नो रक्षतु चक्रपाणिः ।।

*** (५) उपेन्द्रवज्राछन्दः**

यदीन्द्रवज्राचरणेषु पूर्वे भवन्ति वर्णा लघवः कदाचित्।
कुशाग्रवत्तीक्ष्णमते ! तदानीमुपेन्द्रवज्रा कथिता कवीन्द्रैः ।। ५ ।।

अन्वयः—हे कुशाग्रवत्तीक्ष्णमते ! यदि कदाचित् इन्द्रवज्राचरणेषु पूर्वे वर्णाः लघवः भवन्ति, तदानीं कवीन्द्रैः उपेन्द्रवज्रा कथिता।

यदि इन्द्रवज्रा के सब चरणों में प्रथम अक्षर ह्रस्व हों तो वह उपेन्द्रवज्रा छन्द कहा गया है ।। ५ ।।

उपेन्द्रवज्रा प्रथमे लघौ सा।

'इन्द्रवज्रा' के ही प्रथम अक्षर को लघु कर देने से 'उपेन्द्रवज्रा' छन्द होता है।

उदाहरणम्—उपेन्द्र ! वज्रादिमणिच्छटाभिर्विभूषणानां छुरितं वपुस्ते।
स्मरामि गोपीभिरुपास्यमानं सुरद्रुमूले मणिमण्डपस्थम् ।।

*** (६) उपजातिछन्दः**

यत्र द्वयोरप्यनयोऽस्तु पादा भवन्ति सद्वृत्ततयाऽतिकान्त !
विद्वद्भिराद्यैः परिकीर्तिता सा प्रयुज्यतामित्युपजातिरेषा ।।६।।

अन्वयः—हे सद्वृत्ततया अतिकान्त ! यत्र अनयोः द्वयोः अपि तु पादाः भवन्ति । आद्यैः विद्वद्भिः परिकीर्त्तिता सा एषा उपजातिः इति प्रयुज्यताम् ।

जिस छन्द के प्रथम और तृतीय पाद इन्द्रवज्रा के हों और द्वितीय तथा चतुर्थ पाद उपेन्द्रवज्रा के हों वह उपजाति छन्द कहा गया है ॥ ६ ॥

अनन्तरोदीरितलक्ष्मभाजौ पादौ यदीयावुपजातयस्ताः ।
इत्थं किलान्यास्वपि मिश्रितासु वदन्ति जातिष्विदमेव नाम ॥

अव्यवहित पूर्व में जो इन्द्रवज्रा और उपेन्द्रवज्रा छन्द कहे गये हैं, उन दोनों के लक्षणों से युक्त जिस छन्द के चरण हों, वह 'उपजाति' छन्द कहा जाता है। इसी प्रकार दूसरे समानाक्षर चरणवाले छन्दों के परस्पर मिश्रण से उपजाति होती है ।

उदाहरणम्— अत्रानुगोदं मृगयानिवृत्तस्तरङ्गवातेन विनीतखेदः ।
रहस्त्वदुत्सङ्गनिषण्णमूर्धा स्मरामि वानीरगृहेषु सुप्तः ।

(७) दोधकवृत्तम्

आद्यचतुर्थमहीनमते हे ! सप्तमकं दशमञ्च तथाऽन्त्यम् ।
यत्र गुरु प्रकटस्मृतिशक्ते ! तत्कथितं ननु दोधकवृत्तम् ॥ ७ ॥

अन्वयः- हे अहीनमते ! यत्र आद्यचतुर्थं सप्तमकं दशमं च तथा अन्त्यं गुरु [स्यात्], हे प्रकटस्मृतिशक्ते ! तत् ननु दोधकवृत्तं कथितम् ।

जिसके प्रथम, चतुर्थ, सप्तम, दशम और एकादश अक्षर गुरु हों, वह दोधक नाम का छन्द कहा जाता है ॥ ७ ॥

दोधकमिच्छति भत्रितयाद् गौ ।

जिस छन्द में तीन भगण के बाद दो गुरु हों उसका नाम 'दोधक' छन्द है ।

उदाहरणम्—देव ! सदोध्वंकदम्बतलस्थ ! श्रीधर ! तावकनामपदं मे ।
कण्ठतलेऽसुविनिर्गमकाले स्वल्पमपि क्षणमेष्यति योगम् ॥

(८) तोटकछन्दः

सतृतीयकषष्ठमुदात्तमते ! नवमं विरतिप्रभवं गुरु चेत् ।
अधिपिङ्गलशास्त्रमुपात्तरते ! ननु तोटकवृत्तमिदं कथितम् ॥

अन्वयः - हे उदात्तमते ! सतृतीयकषठं नवमं विरतिप्रभवं [च] गुरु (स्यात्) चेत् ननु [तदा] हे अधिपिङ्गलशास्त्रमुपात्तरते ! इदं तोटकवृत्तं कथितम् ।

जिसके सब चरणों में तृतीय, षष्ठ, नवम और द्वादश अक्षर दीर्घ हों, वह तोटकवृत्तकहा गया है ॥ ८ ॥

वद तोटकमब्धिसकारयुतम् ।

जिस छन्द के प्रत्येक पाद में ४ सगण होते हैं, उसे तोटक छन्द कहते हैं

उदाहरणम् – यमुनातटमच्युतबाल्यकला-लसदङ्घ्रिसरोरुहसङ्गरुचिम् ।
मुदितोऽट कलेरपनेतुमघं यदि चेच्छसि जन्म निजं सफलम् ॥

※ (९) भुजङ्गप्रयातछन्दः

यदाद्यं चतुर्थं तथा सप्तमं चेत्तथैवाक्षरं ह्रस्वमेकादशाद्यम् ।
दधद् ! भक्तिमाचार्यपादारविन्दे तदुक्तंकवीन्द्रैर्भुजङ्गप्रयातम् ॥९॥

अन्वयः— हे आचार्यपादारविन्दे भक्तिं दधद् ! यदा आद्यं चतुर्थं तथा सप्तमम् तथैव एकादशाद्यम् अक्षरं ह्रस्वं [चेत्] तदा कवीन्द्रैः तत् भुजङ्गप्रयातम् उक्तम् ।

जिसमें हर एक चरण के प्रथम, चतुर्थ, सप्तम और दशम अक्षर ह्रस्व हों, उसे कवियों ने भुजङ्गप्रयात छन्द कहा है ॥ ९ ॥

भुजङ्गप्रयातं चतुर्भिर्यकारैः ।

जिस छन्द में क्रमशः ४ यगण होते हैं, उसे भुजङ्गप्रयात छन्द कहते हैं ।

उदाहरणम्—

सदारात्मजज्ञातिभृत्यो विहाय स्वमेतं ह्रदं जीवनं लिप्समानः ।
मया क्लेशितः कालियेत्थं कुरु त्वं भुजङ्ग ! प्रयातं द्रुतं सागराय ॥

*** (१०) द्रुतविलम्बितछन्दः**

अयि वशंवद ! यत्र चतुर्थकं गुरु च सप्तमकं दशमं तथा ।
विरतिजं च तथैव विचक्षणैर्द्रुतविलम्बितमित्युपदिश्यते ॥ १० ॥

अन्वयः—अयि वशंवद ! यत्र चतुर्थकं सप्तमकं च तथा दशमं तथैव विरतिजं च [अक्षरं] [गुरु भवति] । विचक्षणैः [तत्] द्रुतविलम्बितम् इति उपदिश्यते ।

जिसके सब चरणों में चतुर्थ, सप्तम, दशम और द्वादश अक्षर गुरु हों, उसे पण्डितों ने द्रुतविलम्बित छन्द कहा है ॥ १० ॥

द्रुतविलम्बितमाह नभौ भरौ ।

जिस छन्द के एक पाद में क्रम से १ नगण, २ भगण और १ रगण होते हैं, उसे द्रुतविलम्बित छन्द कहते हैं ।

उदाहरणम्—विपदि धैर्यमथाभ्युदये क्षमा सदसि वाक्पटुता युधि विक्रमः ।
यशसि चाभिरुचिर्व्यसनं श्रुतौ प्रकृतिसिद्धमिदं हि महात्मनाम् ॥

*** (११) वंशस्थं वृत्तम्**

उपेन्द्रवज्राचरणेषु सन्ति चेदुपान्त्यवर्णा लघवः कृता यदा ।
सदानतिभ्राजितभारतीरते ! वदन्ति वंशस्थमिदं बुधास्तदा ॥ ११ ॥

अन्वयः—हे सदानतिभ्राजितभारतीरते ! चेद् उपेन्द्रवज्राचरणेषु उपान्त्य-वर्णाः यदा लघवः कृताः सन्ति, तदा बुधाः इदं वंशस्थं वदन्ति !

उपेन्द्रवज्रा के सब पादों में यदि ग्यारहवाँ अक्षर लघु हो तो उसको वंशस्थ छन्द कहते हैं ।। ११ ।।

जतौ तु वंशस्थमुदीरितं जरौ ।

जिस छन्द के प्रत्येक चरण में क्रमशः १ जगण, १ तगण और १ जगण तथा १ रगण होते हैं, उसे वंशस्थ छन्द कहते हैं ।

उदाहरणम्—विलासवंशस्थविलं मुखानिलैः प्रपूर्य यः पञ्चमरागमुद्गिरन् ।
व्रजाङ्गनानामपि सक्तचेतसां जहार मानं स हरिः पुनातु नः ।।

(१२) **प्रहर्षिणीछन्दः**

आद्यं चेत्त्रितयमथाष्टमं नवान्त्यं चोपान्त्यं गुरुविरतौ सदुक्तिमन्! स्यात्।
विश्रामौ भवति महेशनेत्रदिग्भिर्विज्ञेया ननु सुमते! प्रहर्षिणी सा ।।१२।।

अन्वयः—हे सदुक्तिमन् ! ननु सुमते ! चेत् आद्यं त्रितयम् अथ अष्टमं नवान्त्यम् उपान्त्यं विरतौ च [एकम् अक्षरं] गुरुं स्यात्, महेशनेत्रदिग्भिः विश्रामः भवति [तदा] साप्रहर्षिणी विज्ञेया ।

जिसमें प्रतिपाद के प्रथम से तीन अक्षर और अष्टम, दशम, द्वादश और त्रयोदश अक्षर दीर्घ हों और तीन-तीन तथा दश-दश अक्षर पर विश्राम हो उसे प्रहर्षिणी छन्द जानना ।। १२ ।।

त्र्याशाभिर्मनजरगाः प्रहर्षिणीयम् ।

जिस छन्द के एक पाद में क्रमशः मगण, नगण, जगण, रगण और एक गुरु वर्ण होते हैं उसे प्रहर्षिणी छन्द कहते हैं । इस छन्द में तीसरे और दशवें वर्ण पर यति होती है ।

उदाहरणम् - श्रीनाथे सुरवरपूजिताङ्घ्रिपद्मे कामारेः प्रियतम आर्त्तलोकबन्धौ।
सर्वस्वे विषयवितृष्णमानसानां संसारे मतिरभवत् प्रहर्षिणीह ।।

* (१३) **वसन्ततिलकाछन्दः**

आद्यं द्वितीयमपि चेद् गुरु तच्चतुर्थं
यत्राष्टमं च दशमान्त्यमुपान्त्यमन्त्यम् ।
अष्टाभिरुज्ज्वलमते ! विरतिश्च षड्भि-
र्विज्ञा वसन्ततिलकां किल तां वदन्ति ।। १३ ।।

अन्वयः—हे उज्ज्वलमते ! यत्र चेद् आद्यं द्वितीयम् अपि चतुर्थम् अष्टमं दशमान्त्यम् उपान्त्यम् अन्त्यं च [यद् अक्षरं] तद् गुरु [स्यात्] अष्टाभिः षड्भिः च विरतिः स्यात् [तदा] किल विज्ञाः तां वसन्ततिलकां वदन्ति ।

जिसमें पाद के प्रथम, द्वितीय, चतुर्थ, अष्टम, एकादश, त्रयोदश और चतुर्दश अक्षर गुरु हों और आठ-आठ तथा छः-छः अक्षरों पर विश्राम हो, उसको वसन्ततिलका छन्द कहते हैं ।

ज्ञेयं वसन्ततिलकं तभजा जगौ गः ।

जिस छन्द में तगण, भगण, २ जगण और अन्त में २ गुरु वर्ण हों, उसे वसन्ततिलका छन्द कहते हैं ।

उदाहरणम्—निन्दन्तु नीतिनिपुणा यदि वा स्तुवन्तु
लक्ष्मीः समाविशतु गच्छतु वा यथेच्छम् ।
अद्यैव वा मरणमस्तु युगान्तरे वा
न्याय्यात्पथः प्रविचलन्ति पदं न धीराः ।।

(१४) **मालिनीछन्दः**

प्रथममगुरु षट्कं विद्यते यत्र वृत्ते
तदनु च दशमं चेदक्षरं द्वादशान्त्यम् ।
गिरिभिरथ तुरङ्गैः स्याच्च नूनं विरामः
सुकविजनमनोज्ञा मालिनी सा प्रसिद्धा ।। १४ ।।

अन्वयः—यत्र वृत्ते चेत् प्रथमं षट्कं, तदनु दशमं, द्वादशान्त्यं च अक्षरम् अगुरु विद्यते अथ गिरिभिः तुरङ्गैः च विरामः स्यात् सा नूनं सुकविजनमनोज्ञा मालिनी प्रसिद्धा [भवति]।

जिसमें पाद के प्रथम से ६ अक्षर पर्यन्त, दशम और त्रयोदश अक्षर ह्रस्व हों और आठ-आठ तथा सात-सात अक्षरों पर विश्राम हो, वह छन्द मालिनी नाम से प्रसिद्ध होता है ।। १४ ।।

ननमयययुतेयं मालिनी भोगिलोकैः ।

यदि दो नगण, १ मगण, पुनः २ यगण हों तो वह मालिनी छन्द कहलाता है ।

उदाहरणम् –

असितगिरिसमं स्यात् कज्जलं सिन्धुपात्रे, सुरतरुवरशाखा लेखनी पत्रमुर्वी ।
लिखति यदि गृहीत्वा शारदा सर्वकालं, तदपितव गुणानामीश ! पारं न याति ।।

(१५) हरिणीछन्दः

स्युरिह लघवः पञ्च प्राच्यास्ततो दशमान्तिक-
स्तदनु लघुतायुक्तौ वर्णौ यदि त्रिचतुर्दशौ।
प्रभवति पुनर्यत्रोपान्त्योऽधिभारति सद्रते !
यतिरपि रसैर्वेदैरश्वैः स्मृता हरिणीति सा ।। १५ ।।

अन्वयः—हे अधिभारति सद्रते ! इह यत्र प्राच्याः पञ्च [वर्णाः] लघवः स्युः ततः दशमान्तिकः [वर्णः लघुः स्यात्] तदनु यदि त्रिचतुर्दशौ वर्णौ लघुतायुक्तौ [स्याताम्] पुनः उपान्त्यः [वर्ण लघुः] प्रभवति रसैः वेदैः अश्वैश्च यतिरपि [स्यात् तदा] सा हरिणी इति स्मृता ।

जिसमें प्रतिपाद के आदि से पांच अक्षर ह्रस्व हों और एकादश, त्रयोदश, चतुर्दश, षोडश संख्यक अक्षर ह्रस्व हों और छः चार तथा सात अक्षरों पर विराम हो, वह हरिणी छन्द है ।। १५ ।।

न समरसला गः षड्वेदैर्हयैर्हरिणी मता ।

जिस छन्द में क्रमशः नगण, सगण, मगण, रगण, सगण, लघु और गुरु हो उसे हरिणी छन्द कहते हैं । इसमें ६, ४ और ७ वर्णों पर यति होती है ।

उदाहरणम्—विरमत बुधा ! योषित्सङ्गात् सुखात् क्षणभङ्गुरात्
कुरुत करुणामैत्रीः प्रज्ञावधूजनसङ्गमम् ।
न खलु नरके हाराक्रान्तं घनस्तनमण्डलं
शरणमथवा श्रोणीबिम्बं रणन्मणिमेखलम् ।।

***(१६) शिखरिणीछन्दः**

यदा पूर्वो ह्रस्वो भवति मतिमन् ! षष्ठकपरा-
स्ततो वर्णाः पञ्च प्रकृतिसरल ! स्युस्तु लघवः ।
त्रयोऽन्ये चोपान्त्याः सुकविजनतासौख्यकरणी
रसैरीशैर्यस्यां भवति विरतिः सा शिखरिणी ।। १६ ।।

अन्वयः— हे मतिमन् ! यदा पूर्वः (वर्णः) ह्रस्वः भवति, हे प्रकृतिसरल ! ततः षष्ठकपराः पञ्च वर्णाः तु लघवः स्युः, अन्ये च उपान्त्याः त्रयः (वर्णाः लघवः स्युः), यस्यां रसैः ईशैः विरतिः भवति सा सुकविजनतासौख्यकरणी शिखरिणी (बोध्येति शेषः) ।

जिसके चारों चरणों में प्रथम, सप्तम, अष्टम, नवम, दशम, एकादश, चतुर्दश, पञ्चदश और षोडश अक्षर ह्रस्व हों और छः-छः तथा ग्यारह अक्षर पर विश्राम हो, वह शिखरिणी छन्द है ।। १६ ।।

रसै रुद्रैश्छिन्ना यमनसभला गः शिखरिणी ।

जिस छन्द में यगण, मगण, नगण, सगण, भगण तथा अन्त में क्रमशः १ लघु और १ गुरु हों, उसे शिखरिणी छन्द कहते हैं । इसमें ६ और ११ वर्णों पर यति होती है ।

उदाहरणम्--मुदा विद्याभ्यासं विदधदभिमानेन रहितो
गुरोः पादाम्भोजं शिरसि निदधत् पुष्पसदृशम् ।
नहि व्यर्थं कालं निजमपि नयन्नीशदयया
चिरंजीव च्छात्र ! त्वमनिशमसंशयमिह सुखी ।।

*** (१७) मन्दाक्रान्ता छन्दः**

चत्वारः प्राग् यदि हि गुरवो द्वौ दशैकादशौ चे-
च्छन्नोज्ञानप्रसितधिषण ! द्वादशान्त्यौ सदैव ।
तद्वच्चान्त्यौ युगरसहयैर्यत्र वृत्ते विरामो
मन्दाक्रान्तां प्रवरकवयः साधु तां सङ्गिरन्ते ।।

अन्वयः--हे छन्दोज्ञानप्रसितधिषण ! यत्र वृत्ते यदि हि प्राक् चत्वारः [वर्णाः] गुरवः [स्युः] दशैकादशौ च द्वादशान्त्यौ सदैव तद्वदेव अन्त्यावपि च द्वौ [वर्णौ गुरू स्याताम्], युगरसहयैः विरामश्च [स्यात्]। प्रवरकवयः तां मन्दाक्रान्तां साधु संगिरन्ते ।

जिसके सब चरणों में प्रथम से चार वर्ण, उसके बाद दशम, एकादश, त्रयोदश, चतुर्दश, षोडश और सप्तदश अक्षर गुरु हों और चार-चार, छः-छः तथा सात-सात वर्णों पर विश्राम हो, वह मन्दाक्रान्ता नामक छन्द कहा गया है ।। १७ ।।

मन्दाक्रान्ताम्बुधिरसनगैर्मो भनौ तौ गयुग्मम् ।

यदि मगण, भगण, नगण, दो तगण, और अन्त में दो गुरु हों तो उसे मन्दाक्रान्ता छन्द कहते हैं । इसमें ४, ६ और ७ वर्णों पर यति होती है ।

उदाहरणम्--

शान्ताकारं भुजगशयनं पद्मनाभं सुरेशं विश्वाधारं गगनसदृशं मेघवर्णं शुभाङ्गम् ।
लक्ष्मीकान्तं कमलनयनं योगिभिर्ध्यानगम्यं वन्दे विष्णुं भवभयहरं सर्वलोकैकनाथम् ।

* (१८) शार्दूलविक्रीडितं छन्दः

आद्याश्चेद गुरवस्त्रयो यदि ततः षष्ठस्तथा चाष्टमः
स्यादेकादशतस्त्रयस्तदनु नन्वष्टादशाद्यान्तिमाः ।
मार्त्तण्डैर्मुनिभिश्च यत्र विरतिश्छन्दोऽनुसन्धानकृत् !
तद् वृत्तं प्रवदन्ति काव्यरसिकाः शार्दूलविक्रीडितम् ॥ १८ ॥

अन्वयः--हे छन्दोऽनुसन्धनकृत ! यदि आद्याः त्रयः गुरवः [स्युः] ततः षष्ठः तथा अष्टमश्च गुरुः [स्यात्], ननु एकादशतः त्रयः [गुरवः]. तदनु अष्टादशाद्यान्तिमाः [गुरवः स्युः], मार्तण्डैः मुनिभिश्च यत्र विरतिः [स्यात्], काव्यरसिकाः तत् शार्दूलविक्रीडितं वृत्तं प्रवदन्ति ।

जिसके चारों चरणों में प्रथम से तीन अक्षर और षष्ठ, अष्टम, द्वादश, त्रयोदश, चतुर्दश, षोडश, सप्तदश और अन्तिम अक्षर दीर्घ हों तथा बारह-बारह सात-सात अक्षरों पर विश्राम हो, उसको काव्यरसिक शार्दूलविक्रीडित छन्द कहते हैं ।

सूर्याश्वैर्यदि मः सजौ सततगा शार्दूलविक्रीडितम् ।

जिस छन्द मे मगण, सगण, जगण सगण और दो तगण तथा अन्त में १ गुरु हो और १२ तथा ७ पर यति हो उसे शार्दूलविक्रीडित छन्द कहते हैं ।

उदाहरणम्—नान्योद्योगवता न चाप्रवसता नात्मानमुत्कर्षता
नालस्योपहतेन नान्यमनसा नाचार्यविद्वेषिणा ।
लज्जाशीलविलस-सुन्दरमुखीं सीमन्तिनीं नेच्छता
लोके ख्यातिकरः सतामभिमतो विद्यागुणः प्राप्यते ॥

(१९) स्रग्धरा वृत्तम्

चत्वारो यत्र वर्णा प्रथममलघवः षष्ठकः सप्तमोऽपि
द्वौ तद्वत्षोडशाद्यौ श्रुतिधरपथभृत् ! षोडशान्त्यो तथाऽन्त्यौ ।
छन्दःशास्त्राभिलाषिन् मुनिमुनिमुनिभिर्दृश्यते चेद्विरामः
शिष्य ! स्तुत्यैः कवीन्द्रैः सततनिगदिता स्रग्धरा सा प्रसिद्धा ॥१९॥

अन्वयः—हे श्रुतिधरपथभृत ! यत्र प्रथमं चत्वारो वर्णा अलघवः [स्युस्तथा] षष्ठकः सप्तमः अपि [अलघुः स्यात्] हे छन्दशास्त्राभिलषिन् ! तद्वत् षोडशाद्यो द्वौ षोडशान्त्यौ तथा अन्त्यो [गुरू स्याताम्], हे शिष्य ! मुनि-मुनि-मुनिभिः विरामश्चेत् दृश्यते, [तदा] स्तुत्यैः कवीन्द्रैः सततनिगदिता प्रसिद्धा सा स्रग्धरा स्यात्] ।

जिसके प्रत्येक चरण में प्रथम चार अक्षर तथा षष्ठ, सप्तम, चतुर्दश, पञ्चदश, सप्तदश, अष्टादश, विंशत और एकविंशतितम अक्षर दीर्घ हों और सात-सात अक्षरों पर विराम हो, वह स्रग्धरा नाम का वृत्त कहा गया है ॥ १९ ॥

म्रभ्नैर्यानां त्रयेण त्रिमुनियतियुता स्रग्धरा कीर्तितेयम् ।

जिस छन्द में मगण, रगण, भगण, नगण और ३ यगण हों तथा ३ बार सात-सात अक्षरों पर यति हो उसे स्रग्धरा कहते हैं ।

उदाहरण—आयुः कल्लोललोलं कतिपयदिवसस्थायिनी यौवनश्री-
रर्थाः सङ्कल्पकल्पा घनसमयतडिद्विलासना भोगपूराः ।
कण्ठाश्लेषोऽपि गूढं तदपि च न चिरं यत्प्रियाभिः प्रणीतं
ब्रह्मण्यासक्तचित्ता भवत भवभयाम्भोधिपारं तु यातुम् ॥

(२०) शालिनीछन्दः[1]

ह्रस्वो वर्णो जायते यत्र षष्ठो हे जिज्ञासो ! तद्वदेवाष्टमान्त्यः ।
विश्रामः स्याच्छिष्य ! वेदैस्तुरङ्गैस्तां भाषन्ते शालिनीं छान्दसीयाः ॥

अन्वयः—हे जिज्ञासो ! यत्र षष्ठः तद्वत् एव अष्टमान्त्यः वर्णः ह्रस्वः जायते, शिष्य ! वेदैः तुरङ्गैः विश्रामः स्यात्, तां छान्दसीयाः शालिनीं भाषन्ते ।

जिस छन्द में षष्ठ और नवम अक्षर ह्रस्व हों और चार-चार तथा सात-सात अक्षरों पर विश्राम हों उसको छन्द के जानने वाले शालिनी छन्द कहते हैं ।

इति छन्दोविंशतिका समाप्ता ।

———

१. यह बीसवाँ छन्द वाराणसी की परीक्षा में निर्धारित नहीं है । अधिक प्रसिद्ध होने से यहाँ दे दिया गया है ।

अन्य महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ

- **आह्निकसूत्रावली** । (शुक्लयजुर्वेदीय) । सम्पा० वैद्य नारायणविट्ठल पुरन्दरे
- (ऋग्वेदीय) **ब्रह्मकर्मसमुच्चय** ।
- **मण्डपकुण्डसिद्धि** (कुण्डमण्डपसिद्धि) । संस्कृत-हिन्दी टीका सहित । महर्षि अभयकात्यायन
- **यज्ञमन्त्रसंग्रह** । 'अशोकेन्दु' हिन्दी टीका सहित । पं० अशोक कुमार गौड 'वेदाचार्य'
- (शुक्लयजुर्वेदीय) **रुद्राष्टाध्यायी** । 'अशोकेन्दु' हिन्दी टीका सहित । पं० अशोक कुमार गौड 'वेदाचार्य'
- **सन्ध्योपासनपद्धति** । सन्ध्योपासन के विषय में शास्त्रीय प्रमाण युक्त अनेक ज्ञातव्य विषयों सहित
- **सर्वदेवप्रतिष्ठामहोदधि** । हिन्दी टीका सहित । पं० अशोक कुमार गौड 'वेदाचार्य'
- **काण्वसंहिता** । (शुक्लयजुर्वेदीय) । मूलमात्र
- **तैतिरीयसंहिता** । (कृष्णयजुर्वेदीय) । मूलमात्र
- **पाणिनीयशिक्षा** । वेदाङ्गशिक्षाविमर्शाख्य संस्कृत एवं हिन्दी व्याख्या सहित । व्याख्याकार—आचार्य शिवराज कौण्डिन्न्यायन
- **याज्ञवल्क्यशिक्षा** । 'शान्ति' संस्कृत एवं हिन्दी व्याख्या सहित । डॉ० नरेश झा
- **शुक्लयजुर्वेदसंहिता** (गुटका) । मूलमात्र । सम्पा०—दौलतरामगौड
- **अनुवादचन्द्रिका** । डॉ० ब्रह्मानन्दत्रिपाठी
- **शब्दरूपावली** । निर्णयसागर संस्करण से पुनर्मुद्रित
- **धातुरूपावली** । निर्णयसागर संस्करण से पुनर्मुद्रित
- **प्रथमा शब्द-धातुरूप संग्रह** । पं० रामचन्द्र झा
- **वृहद्वकहडाचक्रम्** । पं० अवधबिहारी अग्निहोत्री